वर्तमान भारतीय शिक्षा पर स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन का क्या प्रभाव पड़ा है?

अथवा

शिक्षा में विवेकानंद की देन बताओ। हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति उनका प्रतिनिधित्व कैसे करती है?

अथवा

शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य, पाठ्यचर्या और शिक्षक विधियों के संदर्भ में स्वामी जी के विचारों की विवेचना कीजिए।

अथवा

विवेकानंद के प्रचलित शिक्षा प्रणाली की किस प्रकार आलोचना की? उनके द्वारा सुझाये गए शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा कीजिए।

परिचय :-

स्वामी विवेकानंद जी बहुआयामी व्यक्तित्व, ओजस्वी वक्ता, अध्यात्मवादी, अप्रतिम प्रतिभा के धनी, अलौकिक गुणों से सम्पन्न, नवजागरण के अग्रदूत, समन्वयवादी व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति थे।

पंडित नेहरू ने स्वामी जी के विषय में लिखा है—

"भारत के अतीत में आस्था रखते हुए भी विवेकानन्द जी का जीवन की समस्याओं का दृष्टिकोण आधुनिक था और वे भारत के अतीत तथा वर्तमान के बीच एक बड़े संयोजक थे। उनका ध्येय समाज सेवा के द्वारा मानवता की सेवा करना और शिक्षा के माध्यम से जन-शिक्षा, धार्मिक चेतना तथा सामाजिक जागरूकता पैदा करना था।"

जीवन इतिहास :-

स्वामी विवेकानंद का जन्म 12 जनवरी 1863 में कलकत्ता शहर में हुआ था। इनके पिता विश्वनाथ एक सुसंपन्न एवं प्रतिष्ठित वकील थे। इनकी माता भुवनेश्वरी देवी एक पवित्र एवं विदुषी महिला थी। इनका बचपन का नाम नरेन्द्र नाथ था। बचपन में इनकी माता जी इनको रामायण, महाभारत और पुराणों की कथायें सुनाया करती थी अतः इस धार्मिक वातावरण की गहराई ने इनको आरम्भ से ही गंभीर, चिंताशील, धर्मनिष्ठ, कर्मनिष्ठ बना दिया। नरेंद्रनाथ बाल्यावस्था से ही अत्यन्त प्रतिभाशाली थे। इन्होंने साहित्य, इतिहास, कविता और दर्शन का गहरा

अध्ययन किया। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वे प्रार्थना उपासना और ध्यान में लीन रहते थे। ज्ञान के प्रकाश से मंडित, आध्यात्मिक तेज से प्रदीप्त और पुरुषकीय आकर्षण से युक्त इनका व्यक्तित्व अत्यंत प्रभावी था।

प्राचार्य हेस्टी ने कहा था — "नरेन्द्रनाथ वास्तव में प्रतिभा शाली है। मैं बहुत दूर-दूर तक घूमा हूँ परन्तु ऐसी योग्यता और सम्भावना वाले किसी बालक के दर्शन मुझे नहीं हुए। जर्मनी के विश्वविद्यालयों के दर्शन शास्त्र के छात्र भी ऐसे नहीं है, वह निश्चित ही जीवन में यश प्राप्त करेगा।

11 सितम्बर 1893 में स्वामी विवेकानन्द अमेरिका के शिकागो शहर में एक सम्मेलन में भाग लेने पहुँचे और उस व्याख्यान से उसने सभी को अत्यधिक प्रभावित किया। स्वामी जी वेदांत के उपदेशों का भारत में ही नहीं यूरोप और अमेरिका में व्यापक प्रचार किया। 20 जून 1899 को स्वामी जी पश्चिमी देशों की यात्रा पर गये लेकिन खराब स्वास्थ्य के कारण वे 9 दिसम्बर 1900 को वापस आ गये और अपने देश में ही वेदान्त के प्रचार, दीन-दुःखियों की सेवा और विश्व

बंधुत्व के प्रचार में लगे रहे। पंजुलाई 1902 की रात्रि को स्वामी जी केवल 39 वर्ष की आयु में इस संसार को छोड़कर चले गये।

तथा उनका प्रिय संदेश था — उठो जागो और श्रेष्ठ पुरुषों के पास जाकर ज्ञान प्राप्त करो।

विवेकानंद जी के दार्शनिक विचार

1. स्वामी विवेकानन्द एक वेदान्ती के रूप में :-

स्वामी विवेकानन्द एक वेदान्ती थे। वह वेदान्त को पूर्ण रूप से अवैयक्तिक मानते थे। वेदान्त शाश्वत है इसे किसी व्यक्ति ने आत्म साथ नहीं किया। अतः यह किसी व्यक्ति विशेष पर केन्द्रित नहीं। स्वामी विवेकानंद के अनुसार अद्वैतवाद, द्वैतवाद तथा विशिष्ट द्वैतवाद वेदान्त के ही रूप हैं अतः उनके अनुसार ये एक दूसरे के विरोधी नहीं हैं ये अपने आप में पूर्ण नहीं। ये तो केवल अवस्थाएँ हैं जो मनुष्य को उच्चतम अनुभूति की ओर उत्तरोत्तर विकसित करती है यहाँ तक कि प्रत्येक वस्तु सृष्टा के साथ एकाकार हो जाती है।

? ईश्वर सम्बंधी धारणा :-
एक परिपक्व वेदान्ती के नाते स्वामी जी ने ईश्वर की तीन विशेषताएँ हैं —
वह असीम अस्तित्व है। (He is infinite existence.)
वह असीम ज्ञान है। He is infinite knowledge.
वह असीम आनन्द है। He is infinite bliss.

स्वामी जी के अनुसार ईश्वर सर्वव्यापक और अरूप है वह संसार की सभी वस्तुओं में विद्यमान है। इस प्रकार विवेकानंद ने मनुष्य के सामने उच्च आदर्श को रखा।

मानव में विश्वास :-
स्वामी विवेकानंद को मानव में गहरा विश्वास था। उन्होंने मानव की महत्ता तथा विविधता को पहचाना। उनके अनुसार, "मानव शरीर के मानव आत्मा की उपासना की उपासना ही ईश्वर की उपासना है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि सभी जीव ही ईश्वर का मंदिर हैं। परन्तु मानव का शरीर सब से ऊँचा मन्दिर है — मंदिरों का ताजमहल है। उनके अनुसार, "यदि आप मनुष्य की पूजा नहीं कर सकते

तो जो ईश्वर का रूप है, तो आप उस ईश्वर की पूजा कैसे कर सकते हो जो अरूप है। यदि आप ईश्वर के चेहरे को नहीं देख सकते, तो आप उसे बादलों में या निर्जीव रूपों में या अपनी बुद्धि के काल्पनिक चित्रों में कैसे देख सकते हैं? यदि आप नर-नारियों में ईश्वर को देखना आरम्भ कर लें तो मैं आज से ही आपको व्यावहिक व्यक्ति समझने लगूंगा।"

4. धर्म की धारणा :-

स्वामी जी के अनुसार सभी दर्शन समान हैं। कोई भी धर्म दूसरे से छोटा नहीं। सभी धर्मों का लक्ष्य एक ही है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने ही धर्म में रहना चाहिए। उनकी धर्म सम्बन्धी धारणा बड़ी उदार थी। उन्होंने विश्वात्मक एकता एवं सार्वजनिक धर्म की धारणा को प्रस्तुत किया। धर्म परस्पर विरोधी नहीं हैं। विभिन्न धर्म ईश्वर की विभिन्न शक्तियां हैं जो मानव-मात्र हित के लिए कार्य कर रही हैं।

स्वामी विवेकानन्द ने आध्यात्मिक भ्रातृत्व पर बहुत जोर दिया है। उनके अनुसार सन्यासी अपनी आत्मा के दर्शन करता है।

पूर्णता मनुष्य की विरासत :-
स्वामी जी के अनुसार, " पूर्णता प्राप्त नहीं की जा सकती। वह तो पहले ही हम सब में विद्यमान है। अमरता और आनन्द को प्राप्त नहीं किया जा सकता। वे तो पहले से ही हमारे पास है।"

आत्मानुभूति में विश्वास :-
स्वामीजी के अनुसार मनुष्य आत्माचारी है आत्मा का अंतिम लक्ष्य परमात्मा की प्राप्ति या आत्मानुभूति या आत्मज्ञान या मुक्ति या मोक्ष है। इसलिए मनुष्य जीवन का लक्ष्य भी यही होना चाहिए। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ज्ञानयोग कर्मयोग और भक्तियोग आवश्यक है।

मानव सेवा में विश्वास :-
स्वामी जी मानते है कि मानव सेवा से बढ़कर अन्य कोई धर्म नहीं है वे मानव में ही ईश्वर के दर्शन करते हैं इसी कारण वे मानव सेवा को ही ईश्वर सेवा कहते हैं जो प्रत्यक्ष है पहले उसकी सेवा की जानी चाहिए उसी में ईश्वर की सेवा है। अतः उसे अपना जीवन प्रत्येक प्राणी की सेवा में लगा देना चाहिए। स्वामी जी के ये विचार उनकी विश्वबन्धुता की भावना में देखने को मिलते हैं।

8. निर्भीकता, सत्यता और स्वतंत्रता में विश्वास :-
स्वामी जी मानव जीवन में निर्भीकता, सत्यता, स्वतंत्रता को आवश्यक मानते हैं। उन्होंने कहा है कि डरपोक, नीरस मलिन और उदासीन व्यक्ति अपने जीवन में किसी कार्य को नहीं कर सकता। उन्होंने कहा है कि वीर बनो। हमेशा कहो मैं निर्भय हूं सबको कहो- डरो मत, भय मृत्यु है, भय पाप है, भय नरक, भय अधार्मिकता है तथा भय का जीवन में कोई स्थान नहीं है।

विवेकानंद जी का शिक्षा :-
स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा-दर्शन का आधार भारतीय वेदांत और उपनिषद ही रहे हैं। उनका मानना है कि सभी प्रकार का लौकिक तथा आध्यात्मिक ज्ञान मनुष्य के मन में है ज्ञान बाहर से नहीं आता, वह तो अंदर ही है। शिक्षा इसी ज्ञान का अनावरण करती है। स्वामी जी के अनुसार कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को नहीं सिखाता। प्रत्येक व्यक्ति अपने आप स्वयं सीखता है।
स्वामी जी ने पुराने समय की शिक्षा प्रणाली के दोषों की ओर संकेत

करते हुए कहा कि यह शिक्षा प्रणाली मनुष्य को मशीन बना रही है, इससे लिपिकों का निर्माण हो रहा है। इससे मनुष्यों में ही भावना आती है। इससे हम अपने हाथ पैरों का उपयोग नहीं कर पाते और बच्चे रट-रट कर तोता बन रहे हैं और उनके मस्तिष्क नष्ट हो रहे हैं।

स्वामी जी ने उस समय की अमानुषिकता उत्पन्न करने वाली अव्यावहारिक और निषेधात्मक शिक्षा के स्थान पर देश की असभ्यता और अंधविश्वास को दूर हटाने वाली, वास्तविकता से परिचय कराने वाली, आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली व्यावहारिक शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने कहा, "हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिससे द्वारा चरित्र निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा है।

स्वामी जी के शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त :—

1. ज्ञान व्यक्ति के भीतर होता है :—

अधिकांश पाश्चात्य शिक्षा शास्त्रियों का विश्वास है कि व्यक्ति तथा वातावरण की अन्तःक्रिया से ज्ञान की उत्पत्ति होती है परन्तु स्वामी जी का विश्वास है कि ज्ञान मनुष्य के शरीर के भीतर होता है। यह

बाह्य वातावरण की उपज नहीं होता।

2. आत्म-शिक्षा :-
स्वामीजी का मत है कि बच्चा आत्म-शिक्षा से सीखता है। बच्चा स्वयं अपने आपको सिखाता है उसकी अपनी सूझ-बूझ तथा विचार-शक्ति द्वारा ही उसे सभी चीजों का स्पष्ट ज्ञान होता है। बच्चे पर कोई भी चीज थोपी नहीं जानी चाहिए।

3. शिक्षा बच्चों की आवश्यकता के अनुसार :-
स्वामी जी के अनुसार प्रत्येक आत्मा को ईश्वर की आत्मा समझो और प्रत्येक बच्चे को ईश्वर का रूप मानो। इसलिए शिक्षण बच्चों की आवश्यकताओं के अनुकूल होना होना चाहिए। इन आवश्यकताओं का निर्णय माता, पिता या अध्यापकों के अनुसार नहीं, बल्कि बच्चों की निहित प्रवृत्तियों के अनुसार करना चाहिए।

4. शिक्षा का सार मन की एकाग्रता :-
स्वामी विवेकानंद मन की एकाग्रता को शिक्षा का सार मानते हैं। एकाग्रता जीवन

में सफलता के लिए बहुत आवश्यक है। मन को अधिक से अधिक एकाग्र करना ही शिक्षा का मुख्य लक्ष्य है। शिक्षा को अभिप्राय पढ़ी गई पुस्तकों की संख्या नहीं, बल्कि यह तथ्य है कि वह कार्य में लिए हुए कार्य पर किसी सीमा तक मन को एकाग्र करना पड़ता है।

5 ~~एक~~ एकाग्रता के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए ब्रह्मचर्य से अचलमे मानसिक एवं अध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है।

6 शिक्षा बालक में आत्मिक निष्ठा तथा श्रद्धा विकसित करे एवं उसमें आत्मत्याग की प्रगति करके पूर्णता की अभिव्यक्ति करे।

7 धार्मिक शिक्षा को पुस्तकों की अपेक्षा व्यवहार, आचरण तथा संस्कारों के द्वारा दिया जाये।

8 बालक तथा बालिकाओं को समान शिक्षा मिलनी चाहिये।

9 स्त्रियों को विशेष रूप से धार्मिक शिक्षा दी जाये।

10 तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाये जिससे औद्योगिक उन्नति हो तथा देश की आर्थिक दशा सुधर जाये।

शिक्षा का अर्थ

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का अर्थ केवल उन सूचनाओं से ही नहीं है जो बालकों के मस्तिष्क में बलपूर्वक ठूँसी जाती है। उन्होंने लिखा है – "यदि शिक्षा का अर्थ सूचनाओं से होता, तो पुस्तकालय संसार के सर्वश्रेष्ठ संत होते तथा विश्वकोष ऋषि बन जाते।"

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित हो चाहिए:-

1 पूर्णत्व को प्राप्त करने का उद्देश्य:- स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य अन्तर्निहित पूर्णता को प्राप्त करना है।

2 शिक्षा का उद्देश्य शारीरिक एवं मानसिक विकास करना है जिसे प्राप्त करके मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा होना

3 शिक्षा का उद्देश्य नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास करना होना चाहिए।

5 स्वामी जी ने चरित्र निर्माण को शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य माना है।

5 स्वामी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य आत्मविश्वास तथा श्रद्धा एवं आत्मत्याग की भावना को माना है।

6 स्वामी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य विभिन्नता में एकता की खोज करना है।

7 शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तियों को धार्मिक शिक्षा देना होना चाहिए

8 स्वामी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तियों को व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करना चाहिए।

शिक्षण विधियाँ :-

स्वामी जी ने अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त की थी परन्तु अपने अन्दर जिस आध्यात्मिक चेतना की जागृति की उसका श्रेय एकान्त चिन्तन ध्यान और योग था। इसलिए उन्होंने उत्तम आचरण सीखने के लिए इसी प्रक्रिया पर बल बल दिया।

1 अनुकरण विधि :- बच्चों के सामने उच्च आदर्श प्रस्तुत करना जिसका अनुकरण कर वे उत्तम आचरण की शिक्षा प्राप्त करें।

2. उपदेश तथा व्याख्यान द्वारा :- विभिन्न तथ्यों का ज्ञान प्राप्त करना और यह व्याख्यान द्वारा देना।

3. वैयक्तिक निर्देशन तथा परामर्शी विधि। बच्चों की शंकाओं को दूर करना और उन्हें उचित मार्ग पर अग्रसर करना, यह निर्देशन तथा परामर्श विधि है।

4 तर्क विचार-विमर्श तथा विश्लेषणात्मक विधि के द्वारा ~~ज्ञान~~ ज्ञान प्रदान करना।

5 एकाग्रता की विधि :- स्वामी जी मन की एकाग्रता को ~~मन~~ शिक्षा का सार मानते हैं। एकाग्रता के लिए ब्रह्मचर्य आवश्यक है

6. विचार विमर्श तथा चिन्तन :- ~~के लिए~~ अनौपचारिक वातावरण में अपने अध्यापक से ~~लिए~~ साथ विचार-विमर्श करके विद्यार्थी अपने मार्ग की कठिनाइयों को दूर कर सकता है।

KRISHNAMURTI

कृष्णामूर्ति के शैक्षिक दर्शन की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए
अथवा
कृष्णामूर्ति के शैक्षिक दर्शन पर आलोचनात्मक टिप्पणी लिखिए। इसका भारतीय शिक्षा पर क्या प्रभाव है?

परिचय :— जिद्दू कृष्णामूर्ति का जन्म 11 मई 1895 में आन्ध्र प्रदेश के चित्तूर जिले के मदनपल्ली नामक स्थान पर हुआ था। इनकी माता जिद्दू संजीवम्मा मृदुभाषी, धर्मपरायण और कृष्ण भक्त इनकी पिता जिद्दू नारायण, एक अवकाश प्राप्त सिविल सर्वेन्ट के साथ पुराने थियोसोफिस्ट भी थे। कृष्ण मूर्ति की बचपन में ही आध्यात्मिक को देखकर उस समय के प्रमुख थियोसोफिस्ट व एनीबेसेन्ट ने स्वीकार किया कि इस बालक का भविष्य एक प्रधान आध्यात्मिक शिक्षा के रूप में विश्व का मार्गदर्शन कर सकता है। उदाहार में जे. कृष्णमूर्ति की अध्यक्षता में 'ऑर्डर आफ द स्टार इन द इस्ट' की स्थापना हुई। इस संगठन के अनुसार इसके स्वयं के उदय के साथ ही विश्व को जगतगुरू के आगमन के लिए तैयार करने के लिए समर्पित थे इनको श्रीमती एनीबेसेन्ट ने उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैंड

दर्शन वह है जो हमें सत्य के लिए प्रेम, जीवन के लिए प्रेम तथा प्रज्ञा के लिए प्रेम जागृत करें। इनके दार्शनिक चिन्तन के तत्व विचार, प्रचार-विचार तथा आचार संहिता इस प्रकार है —

1 तत्व-मीमांसा :-

जे. कृष्ण मूर्ति मानते हैं कि एक अखण्ड सत्ता है इसको खण्डों में विभाजित नहीं किया जाना चाहिए। जीवन तो एक अनन्त प्रवाह है यही वास्तविक है। यही वास्तव सत्य है और इसकी सत्ता है। प्रारम्भ से ही जे. कृष्णमूर्ति धार्मिक प्रवृत्ति के थे और भगवान में विश्वास रखते थे लेकिन इनकी ईश्वरीय सत्ता का स्वरूप कुछ अलग ही था। इनका मानना है कि ईश्वर तो सर्वत्र है ईश्वर को मन्दिरों में बन्द करके नहीं रखा जा सकता। उनका मानना है कि ईश्वर कभी भी दृश्य नहीं बन सकता, वह तो परम मौन की अवस्था में स्वयं ही उपस्थित हो जाता है। इन्होंने सबसे अधिक बल प्रेम पर दिया। उनके अनुसार हृदय में प्रेम उत्पन्न करने के लिए आत्मज्ञान और आत्मबोध की आवश्यकता होती है और मनुष्य को इस सद्मार्ग की ओर चलने की आवश्यकता होती है।

विचार मुख्य रूप से इनकी रचनाओं "शिक्षा एवं जीवन का तात्पर्य", "शिक्षा संवाद", स्कूलों के नाम पत्र तथा सीखने की कला में देखने को मिलते हैं—

शिक्षा का अर्थ:-

जे. कृष्णामूर्ति के जीवन पर प्रकृति का गहरा प्रभाव पड़ा। उनका कहना था कि प्रत्येक व्यक्ति प्राकृतिक सौन्दर्य को जाने और अपने स्वार्थ के लिए इस प्राकृतिक सौन्दर्य को नष्ट न करे। उनके अनुसार - शिक्षा का केवल पुस्तकों से सीखना और तथ्यों को कंठस्थ करना मात्र नहीं है अपितु इस योग्य बने कि पक्षियों के कलरव को सुन सके, आकाश को देख सके और उनके साथ अनुभव कर सके। कृष्णामूर्ति के शब्दों में,

"शिक्षा द्वारा ही मनुष्य को जीवन का सही अर्थ समझाया जा सकता है और शिक्षा द्वारा ही इसे अनुचित मार्ग से सद्मार्ग पर लाया जा सकता है।" वास्तविक शिक्षा वह जो मनुष्य को आत्मज्ञान कराए। 'अन्तः मन का ज्ञान ही शिक्षा है।"

शिक्षा के उद्देश्य :-

जे. कृष्णामूर्ति के अनुसार शिक्षा के इस मूल उद्देश्य की प्राप्ति के लिए निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति आवश्यक है—

1. सामाजिक विकास :-

जे. कृष्णामूर्ति के अनुसार व्यक्ति समाज का एक अंग है और उसका विकास भी समाज में ही होता है। व्यक्ति को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज की आवश्यकता पड़ती है और वह अपनी आवश्यकताओं को इसी समाज रहकर पूर्ण करता है। ऐसी स्थिति में समाज को प्रत्येक व्यक्ति से सेवा प्राप्त करने का अधिकार है तथा समाज का भला चुकाना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है।

2. चरित्र का निर्माण :-

सभी शिक्षाविदों की तरह श्री जे. कृष्णामूर्ति भी यह मानते हैं कि शिक्षा का उद्देश्य बालक में चरित्र का निर्माण करना है। उनके अनुसार चरित्रवान का अर्थ है कि असत्य त्यागने व सत्य को

अपनाने का सामर्थ्य रखना। सत्य पर अडिग रहने से स्वामी चरित्र का निर्माण होता है। ऐसा चरित्रवान मानव का जीवन अपने आप में एक आनन्द होता है।

3 व्यवसायिक प्रशिक्षण:-
जे. कृष्णामूर्ति का मानना है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जीविकोपार्जन के लिए कोई न कोई व्यवसाय करना पड़ता है। इसलिए शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को किसी न किसी व्यवसाय के लिए प्रशिक्षित करना आवश्यक होता है।

4 सृजनात्मक का विकास:-
जे. कृष्णामूर्ति का मानना है कि शिक्षा का उद्देश्य बालक को सृजन मानना है कि शिक्षा का उद्देश्य बालक की सृजनात्मकता का विकास करना है। इनके अनुसार सृजनात्मकता से मतलब शरीर, मन और आत्मा तीनों की सृजनशीलता से है। इनके अनुसार बालक को स्वतन्त्र रूप से कार्य करने देना चाहिए न कि उस पर दूसरे के विचारों को थोपना चाहिए।

5 शारीरिक एवं मानसिक विकास:-
जे. कृष्णामूर्ति के अनुसार स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का निवास होता है। इसलिए बालक

का शारीरिक विकास करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

6. आध्यात्मिक मूल्यों का विकास :-
इनके अनुसार आध्यात्मिकता के विकास से इनका अर्थ आध्यात्मिक चेतना के विकास से है, आत्म ज्ञान के विकास से है और नैतिक मूल्यों के विकास से है। शिक्षा का उद्देश्य बालक में ऐसी क्षमताओं को पैदा करना है कि अपने विचारों और कार्यों का हर समय निरीक्षण करता रहे। इसकी प्राप्ति के लिए वे आन्तरिक स्वतन्त्रता, आन्तरिक शान्ति, आत्मानुशासन, धैर्य एवं ज्ञान को आवश्यक मानते हैं, इसके शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक के आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करना है।

7. संवेदनशीलता का विकास :-
जे. कृष्णामूर्ति के अनुसार बालकों में प्रकृति और मानव मात्र के प्रति प्रेम उत्पन्न करना ही सच्ची संवेदनशीलता है। ऐसी संवेदनशीलता में घृणा, क्रोध, द्वेष और हिंसा का कोई स्थान नहीं होगा। इसलिए शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक को संवेदनशील बनाना भी है।

8 सांस्कृतिक विकास :-
जे. कृष्णामूर्ति के अनुसार, "शिक्षा का उद्देश्य ऐसे मानव का निर्माण करना है जो सुसंस्कृत, सभ्य और शिष्ट हो।" इनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य में ऐसी शक्ति एवं चेतना का विकास करना है जिनसे वह पूर्वाग्रहों और पूर्व धारणाओं के विरुद्ध दृढ़तापूर्वक खड़ा हो सके और नई संस्कृति व नए मूल्यों का निर्माण कर सके, जिससे स्वीकृत मानव का निर्माण हो।

9 वैज्ञानिक बुद्धि का विकास :-
जे. कृष्णामूर्ति के समय में विज्ञान एवं तकनीकी का विकास बहुत व्यापक रूप से हो रहा था। विज्ञान के नए-2 आविष्कार हो रहे थे और सभी देशों द्वारा विज्ञान और तकनीकी पर बल दिया जा रहा था। उनके अनुसार वैज्ञानिक तकनीकियों का प्रयोग मानव कल्याण के लिए किया जाना चाहिए। उनका कहना था कि शिक्षा का उद्देश्य बालक में वैज्ञानिक विकास करना होना चाहिए। वैज्ञानिक बुद्धि से इनका तात्पर्य तथ्यों के वास्तविक स्वरूप को जानने से था।